SANATANODAYA सनातनोदय
ISSN (O) : 3048-9318
Vol. 1, No. 1, Year 2024
Available Online : https://sanatanodaya.com/

स्वामी विवेकानंद के संदर्भ में भगवदगीता के कर्मयोग का सामाजिक अनुप्रयोग

लम्बोदर कुमार
शोधार्थी, दर्शनशास्त्र विभाग, राँची विश्वविद्यालय

शोध सार:

कर्मयोग का सामाजिक संदेश निस्वार्थ कर्म के माध्यम से समाज में परिवर्तन लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस शोधपत्र का मूल संदेश यह दर्शाना है कि भगवदगीता के कर्मयोग के सामाजिक अनुप्रयोग सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में सर्वांगीण विकास और प्रगति को प्रभावी ढंग से आगे बढ़ा सकते हैं। लेकिन इसके लिए उन कर्मयोगियों के उत्थान की व्याख्या की आवश्यकता है जो स्वार्थ या पारिवारिक लाभ के विचारों से नहीं बल्कि सभी के कल्याण की इच्छा से प्रेरित होते हैं। गीता में आधुनिक भारत के सामने मौजूद सामाजिक और राजनीतिक गतिरोध का समाधान खोजने के लिए एक बहुत ही महत्वपूर्ण संदेश है और उस संदेश को संक्षेप में 'लोकसंग्रह' के रूप में कहा जा सकता है जिसका शाब्दिक अर्थ है दुनिया के साथ जुड़ाव और अधिक व्यापक रूप से लोगों की उस समुदाय की ओर से विशेष रूप से स्वार्थी कार्य (निष्काम कर्म) करने की इच्छा जिसमें वे खुद को पाते हैं। यह एक योग या आध्यात्मिक अनुशासन का एक तरीका है। अतः कर्मयोग के अनुसार, व्यक्ति को आसक्ति रहित होकर तथा ईश्वर के प्रति समर्पण की भावना से प्रेरित होकर कर्म करना चाहिए।

कुंजीशब्द : स्वामी विवेकानन्द, भगवदगीता, कर्मयोग, योग, लोकसंग्रह और अनासक्ति योग

भगवदगीता उपनिषदों का एक भाष्य है। भगवदगीता का विषय आत्मचिंतन है। जब भगवदगीता पहली बार प्रकाशित हुई, तो कर्म और ज्ञानमार्गीय संन्यासि और दार्शनिकों के बीच संघर्ष हुआ। जो ज्ञानमार्ग में विश्वास करते थे उनका मानना था कि आत्म-ज्ञान ही मोक्ष या मुक्ति का एकमात्र मार्ग है। गीताकार ने अपने निःस्वार्थ कर्मों के महान संदेश और आदर्शों का उपदेश देकर दो विरोधी संप्रदायों के बीच संघर्ष को समाप्त कर दिया। इस निबंध का उद्देश्य हे स्वामी विवेकानन्द के कर्मयोग का सामाजिक अनुप्रयोग। स्वामी विवेकानन्द आलमबाजार मठ में, अपने साथियों के साथ, कभी-कभी अपने युवा शिष्यों के साथ, गीता के विभिन्न अंशों का वर्णन करते थे।

१८९८ में रामकृष्ण मिशन के ४२वें अधिवेशन में विवेकानन्द ने निष्काम कर्म के विषय पर जो प्रवचन दिया था उनमे से गीता का प्रसंग लिया था। १९०० में अमेरिका में दिए गए कई भाषणों में उन्होंने गीता के

ISSN (O) : 3048-9318
Vol. 1, No. 1, Year 2024
Available Online : https://sanatanodaya.com/

श्लोकों का बार-बार उल्लेख किया– जिस माध्यम से गीता का विषय सरल हो गया। विवेकानन्द ने बार-बार कहा है कि मनुष्य अनंत शक्ति का स्रोत है और वह सर्वशक्तिमान है।

विवेकानन्द गीता में श्रीकृष्ण द्वारा कर्मयोग की शिक्षा से बहुत प्रेरित थे। हम जो भी कर्म निरंतर करते हैं - उनमें से हर एक शुभ परिणाम नहीं देता, उनमे शुभ-अशुभ मिश्रित होते हैं। अर्थात ऐसा कोई भी शुभ कर्म नहीं है जिसमें अशुभ का थोड़ा सा भी स्पर्श न हो। लेकिन इससे कर्म नहीं रुकना चाहिए. विवेकानन्द के अनुसार हमें ऐसी गतिविधियों में संलग्न रहना चाहिए जो अच्छाई अधिक और बुराई कम लायें। उन्होंने एक बहुत सुंदर उदाहरण देते हुए कहा, "अर्जुन ने भीष्म और द्रोण को मार डाला, इसके बिना दुर्योधन को हराना संभव नहीं था। बुरी ताकतें अच्छी ताकतों पर हावी हो जाएंगी और देश पर बड़ी विपत्ति आ जाएगी। घमंडी और बेईमान लोगों का एक समूह बलपूर्वक देश की सत्ता पर कब्ज़ा कर लेगा और जनता बुरी तरह संकट में पड़ जाएगी।"। [१]

"२९ मई १९०० को सानफ्रांसिस्को में व्याख्यान देते हुए विवेकानन्द ने ज्ञान योग और कर्म योग का विषय उठाया। अनिवार्य रूप से, उन्होंने कर्म योग पर जोर दिया। अर्जुन ने कृष्ण से पूछा कि यदि ज्ञान जीवन की सर्वोच्च अवस्था है, तो वह कर्म को प्राथमिकता क्यों दे रहे हैं? गीता का अनुसरण करते हुए, विवेकानंद ने शानदार ढंग से कहा कि यह प्रकृति के गुण हैं जो हमें कार्य करने के लिए मजबूर करते हैं।"[२] गीता के श्लोक ३/१ का अनुसरण करते हुए, विवेकानन्द ने बताया कि जो व्यक्ति बाह्य कर्मों को छोड़कर मन में कर्मों का चिन्तन करता है, वह स्वाभाविक रूप से कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता। परंतु जो मनुष्य धीरे-धीरे मन की शक्ति से इंद्रियों को वश में करके कार्य करता है, वह पहले वाले से श्रेष्ठ होता है। इसलिए कर्म ही एकमात्र रास्ता है। विवेकानन्द ने इसे अपने जीवन से समझाया। वे बलपूर्वक कह सके- "श्रीकृष्ण ने सब कुछ किया, परन्तु बिना आसक्ति के। वह संसार में था, परन्तु कभी संसार का नहीं हुआ। सब कुछ करो, परन्तु आसक्ति रहित होकर करो; कर्म के लिए काम करो, अपने लिए कभी नहीं।"[३] (भाषण एवं रचना/5वाँ संस्करण, खण्ड 4, पृ. 217)।

विवेकानन्द का मानना था कि गीता उच्च जीवन के संघर्ष का एक अद्भुत रूपक है। विवेकानन्द कहते हैं कि अध्याय दर अध्याय कृष्ण अर्जुन को उत्तेजित करते रहते हैं- ताकि वह युद्ध से विमुख न हो जाये। कृष्ण अर्जुन को अवसाद से उबरने, मृत्यु का भय त्यागने के लिए कहते हैं। विवेकानन्द कलकत्ता के कुछ युवा शिष्यों से गीता और वेदांत अभ्यास के बारे में बात करते थे और स्वयं समझाते थे। आलमबाजार मठ में रहते हुए वे अक्सर इस कर्मयोग की चर्चा किया करते थे। उनके अनुसार संपूर्ण वेदांत दर्शन गीता में लिखा है। विवेकानन्द बहुत सुंदर ढंग से कहा, "यह महान काव्य ग्रंथ भारतीय साहित्य का शिखर माना जाता है। यह वेद सम्मत है। गीता स्पष्ट रूप से बताती है कि हमें इस जीवन में आध्यात्मिक संघर्ष जीतना है। हमें संघर्ष में शामिल हुए बिना वह सब कुछ अर्जित करना होगा जिसके हम हकदार हैं।"[४]

यह निष्काम कर्म, यह अनासक्ति- हमें खुश रखेगी। जब हमें यह एहसास होगा कि हम दूसरों के लिए कर्म नहीं कर रहे हैं- हम अपने लिए कर्म कर रहे हैं, हम कर्म के लिए कर्म कर रहे हैं, तब कर्म में जो बंधन और क्लेश वह दूर हो जाएगी। जब भी इस अनासक्ति को प्राप्त करना संभव हो, तब मनुष्य का बिकसित होता है। विवेकानन्द ने बार-बार कहा है कि दूसरों के लिए जीबन उतसर्ग करना ही लक्ष्य होना चाहिए।

२९ मई, १९०० को सानफ्रांसिस्को में आयोजित एक बैठक में, विवेकानन्द ने दिखाया कि गीता किस प्रकार पूर्ण सहिष्णुता की बात करती है। हालाँकि साधना पथ अलग है, गीता में कृष्ण हमें लक्ष्य को महत्व न देकर उस पर ध्यान केंद्रित करने का निर्देश देते हैं। " हर कोई सोचता है कि उसका रास्ता सबसे अच्छा तरीका है। बहुत अच्छा लेकिन याद रखें - यह आपके लिए अच्छा हो सकता है। जो भोजन एक के लिए नहीं पचता वही दूसरे के लिए भी पचने योग्य होता है। क्योंकि यह आपके लिए अच्छा है, इसलिए इस निष्कर्ष पर न पहुंचें कि आपका तरीका सभी के लिए समान है। जैक का कोट हमेशा जॉन या मैरी पर फिट नहीं हो सकता।"५ (शब्द और रचनाएँ, 5वाँ संस्करण, खंड 8, पृष्ठ 411)। इसलिए जो वास्तव में बुद्धिमान है, वह कभी भी दूसरे की कमजोरी नहीं देखता और उसे बुरा नहीं कहता, बल्कि उसके स्तर तक नीचे जाकर जहां तक संभव हो उसकी मदद करता है।

स्वामी विवेकानन्द ने निष्काम कर्म को अत्यधिक महत्व दिया और वह कर्म था "बहुजनहिताय बहुजनसुखाय" रामकृष्ण मठ एवं मिशन की स्थापना इसी का क्रियान्वयन है। निष्काम कर्म को पूर्ण सत्य घोषित किये जाने पर भी विवेकानन्द ने सावधान किया। निष्काम कर्म के अर्थ में सुख या दुःख- न तो मन को छूता है, न ही ऐसा है- यदि किसी बदमाश को डकैती करते समय सुख या दुःख की कोई अनुभूति नहीं होती है, तो यह नहीं कहा जा सकता कि वह निष्काम कर्म कर रहा है। अहंकार रहित होकर कर्म करने की बात श्रीकृष्ण ने गीता में कही है- उस कर्म के बारे में विवेकानन्द ने कहा है- उस कार्य में विश्व का कल्याण संभव है।

स्वामी विवेकानंद की सामाजिक-धार्मिक गतिविधियों में विविधता और निरंतरता है और विविधता के तत्व इस तथ्य से स्पष्ट हैं कि गतिविधि का ध्यान सामाजिक-धार्मिक सुधार से हटकर समाज सेवा पर केंद्रित हो गया। स्वामीजी ने भगवद्गीता के कर्मयोग के आदर्श को प्रेरणा और नए विचारों के एकमात्र स्रोत के रूप में इस्तेमाल किया, ताकि वे उस समय के सामाजिक आंदोलनों में सफलता प्राप्त कर सकें और यह तथ्य कि गीता का उपयोग लंबे समय तक विभिन्न सामाजिक आंदोलनों को आगे बढ़ाने में किया जाता है। अपने विचारों के बारे में काफी स्पष्टीकरण के बाद, उन्होंने कर्मयोग के आदर्श के तहत अपनी कार्य योजना को संस्थागत रूप देना शुरू किया। स्वामीजी का दृढ़ विश्वास था कि कर्मयोग की भावना और वे उस व्यक्ति का सम्मान करते थे जो अपनी सेवाओं की परवाह किए बिना दूसरों की सेवा और सहायता करता है और अपनी भक्ति और मुक्ति की परवाह किए बिना दूसरों की सहायता करता है। यहां तक कि गीता में भी कहा गया है, 'कन्यानां कर्मणां न्यासम संन्यासं कवयो विदु' अर्थात ऋषिगण जानते हैं कि संन्यास उन सभी कार्यों का त्याग है जिनके अंत की इच्छा होती है।[६] विवेकानन्द के जीवन और कार्यों में भगवदगीता की बहुत महत्वपूर्ण

भूमिका है। गीता की शिक्षा के सबसे महत्वपूर्ण तत्व, जिसे विवेकानन्द ने अपने अनुयायियों, श्रोताओं और पाठकों को समझाया और स्वयं अपने कार्यों का उपयोग किया, उनकी कर्मयोग नामक पुस्तक में निहित है, दूसरों के लिए खुद को बलिदान करने के लिए तैयार होना, बदले में किसी व्यक्तिगत लाभ की उम्मीद नहीं करना। स्वामी जी ने कृष्ण को प्रथम पुरुष माना, जिन्होंने प्रत्येक जाति के लिए धर्म का द्वार खोला।

स्वामीजी के अनुसार, भारत की सामाजिक समस्या यथार्थवादी है क्योंकि उन्होंने वर्षों तक पूरे देश में घूमने के बाद जनता की गरीबी, अज्ञानता, बीमारी और दुख के बारे में प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त किया। इसके बाद उन्होंने अपनी दृष्टि आम लोगों की ओर मोड़ी जिनके लिए अस्तित्व के लिए संघर्ष ही बुनियादी वास्तविकता है। अपनी यात्राओं में, उन्हें लगातार जीवित मनुष्यों के दुखों, इच्छाओं, दुर्व्यवहारों, दुखों, अमीर और गरीबों और बुखार के संपर्क में लाया गया। उन्होंने भारत का भी अवलोकन किया जहां लाखों लोग महुआ के फूल पर जीवन यापन करते हैं, दस लाख या दो साधु और दस करोड़ या इतने ही ब्राह्मण इन गरीब लोगों का खून चूसते हैं और जहां झोपड़ियाँ और महल अगल-बगल मौजूद हैं, ढेर के ढेर मंदिरों के नजदीक जाने से इनकार करते हैं, संन्यासी केवल थोड़ा-सा फटा हुआ कपड़ा पहनकर अच्छे कपड़े पहने हुए, भूख से त्रस्त लोगों के पास, अच्छी तरह से भोजन किए हुए लोगों के पास चलते हैं।

भारत की सामाजिक समस्याओं का विश्लेषण आर्थिक, राजनीतिक, समाजशास्त्रीय, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और आध्यात्मिक पहलू जैसे विभिन्न कोणों से किया जा सकता है। स्वामी जी का धार्मिक और आध्यात्मिक समस्याओं पर सबसे अधिक जोर था। धार्मिक विकृति विशिष्टता एवं अस्पृश्यता के कुरूप रूपों में प्रकट हुई। विवेकानन्द दुःख का मूल कारण उचित शिक्षा का अभाव मानते हैं। शिक्षा से उनका तात्पर्य उस भारी मात्रा में जानकारी से नहीं था जो मस्तिष्क में डाल दी जाती है और जीवन भर बिना पचे ही सड़ती रहती है। वह जो चाहते थे वह है जीवन-निर्माण, मनुष्य-निर्माण, चरित्र-निर्माण, विचारों का समावेश। यह इसलिये संभव नहीं था क्योंकि राष्ट्र की शिक्षा पर हमारी कोई पकड़ नहीं थी, न धर्मनिरपेक्ष, न आध्यात्मिक। स्वामी जी के अनुसार अभी हमें जो शिक्षा मिल रही है वह पूर्णतया नकारात्मक है क्योंकि एक बात तो यह है कि हमारे अभिभावक मूर्ख हैं, दूसरी बात यह है कि हमारे सभी शिक्षक पाखंडी हैं, परिणामस्वरूप समय के साथ एक विद्यार्थी नकार का पुंज बन जाता है। निर्जीव और अस्थिहीन, यानी इस प्रकार की शिक्षा ने एक भी मौलिक मनुष्य पैदा नहीं किया है।

पश्चिम से भारत वापस आने के बाद स्वामी जी ने आध्यात्मिकता और समाज सेवा के बीच सामंजस्य पर आधारित कार्ययोजना शुरू करने का मन बना लिया था। उपनिषदों और गीता का विशेष उल्लेख करके स्वामी जी ने स्पष्ट किया कि उनकी योजना वेदांत और कर्मयोग का सामंजस्य दर्शाती है और उन्होंने इसे वास्तविक पूजा भी कहा, जैसा कि उन्होंने रामेश्वरम मंदिर में अपने संबोधन में बताया। उन्होंने सिखाया कि बाहरी पूजा केवल आंतरिक पूजा का प्रतीक है; लेकिन आंतरिक पूजा और पवित्रता ही असली चीजें हैं और सभी पूजाओं का सार शुद्ध रहना और दूसरों का भला करना है। स्वामी जी ने इसी संदेश को

'दरिद्र-नारायण' के रूप में व्यक्त किया, जिसका अर्थ है कि गरीबों की सेवा ही ईश्वर की सेवा है, अर्थात 'जीव शिव के रूप में'। स्वामी जी ने इसे समझाने के लिए कहा कि जो व्यक्ति गरीबों, कमजोरों और बीमारों में शिव (ईश्वर) को देखता है, वह वास्तव में ईश्वर का ही रूप है। जो व्यक्ति जाति, धर्म या कुल के बारे में सोचे बिना एक गरीब व्यक्ति की सेवा और मदद करता है, ईससे ईश्वर उस व्यक्ति से अधिक प्रसन्न होते हैं जो उन्हें केवल गरीबों में देखता है। ईश्वर पर विश्वास रखने से व्यक्ति कर्म के फल को ईश्वर को समर्पित कर देता है और उनकी पूजा करने से व्यक्ति कर्म के बदले में किसी भी तरह के फल की अपेक्षा नहीं करता। स्वामीजी के अनुसार, "हर किसी को अपने मन से यह विचार निकाल देना चाहिए कि वह दुनिया के लिए कुछ कर रहा है, क्योंकि दुनिया को किसी की मदद की जरूरत नहीं है।"[७] गीता के अनुसार किए गए कर्म के बदले में किसी भी तरह के फल की अपेक्षा न करना कर्म के फल की आसक्ति को छोड़ने का सबसे आसान तरीका है। स्वामीजी अपने कार्य की योजना में सफलता प्राप्त करने के लिए आत्मविश्वास को बहुत महत्व देते हैं और आत्मविश्वास ईश्वर में विश्वास के समान ही भूमिका निभाता है।

विवेकानन्द द्वारा निभाई गई सामाजिक सेवा के प्रति प्रतिबद्धता स्वामीजी ने भगवद गीता के कर्मयोग के आदर्श को प्रेरणा और नए विचारों के एकमात्र स्रोत के रूप में इस्तेमाल किया, ताकि वे उस समय के सामाजिक आंदोलनों में सफलता प्राप्त कर सकें और यह तथ्य कि गीता का उपयोग लंबे समय तक विभिन्न सामाजिक आंदोलनों को आगे बढ़ाने में किया जाता है। अशिक्षितों के बीच शिक्षा का प्रसार करने, गरीबों को गरीबी और बीमारी से लड़ने में मदद करने, सामाजिक बुराइयों और असमानताओं को दूर करने और उन्हें नैतिकता के उच्च स्तर तक उठाने आदि के लिए भिक्षुओं की ऊर्जा का उपयोग करने की उनकी दृष्टि मठवासी प्रथाओं में अर्थ और नवीनता लाती है। रामकृष्ण मिशन सबसे उल्लेखनीय संस्थाओं में से एक है जिसकी स्थापना महान भिक्षु स्वामी विवेकानन्द ने १८९७ में की थी। यह आधुनिक भारत में एक धार्मिक संगठन के रूप में प्रतिष्ठित था जिसने समाज सेवा को अपने मुख्य लक्ष्यों में से एक के रूप में अपनाया और इसके लिए मुख्य रूप से वेदों, उपनिषदों, गीता आदि से प्रेरणा ली। स्वामीजी ने अपने गुरु श्री रामकृष्ण परमहंस देव की शिक्षाओं का पालन करते हुए रामकृष्ण मिशन के सामाजिक सेवा कार्यक्रम को एक ठोस आकार दिया। स्वामीजी ने रामकृष्ण मिशन के संपूर्ण दृष्टिकोण में अंततः भगवद्गीता पर आधारित कर्मयोग के मार्ग पर जोर दिया। अप्रैल १८९८ में जब स्वामीजी अपने स्वास्थ्य में सुधार के लिए दार्जिलिंग में थे, तो उन्हें कलकत्ता में प्लेग फैलने की खबर मिली। हालांकि उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था, लेकिन उन्होंने सोचा कि वे लोगों की मदद कर सकते हैं। लोग घबराकर भाग रहे थे; दंगाइयों को दबाने के लिए सेना बुलाई गई। स्वामीजी ने तुरंत स्थिति की गंभीरता को समझा और मठ में पहुंचने के दिन ही उन्होंने बंगाली और हिंदी में प्लेग घोषणापत्र तैयार किया क्योंकि वे पीड़ितों की मदद के लिए तुरंत राहत अभियान शुरू करना चाहते थे ।१८९९ में प्लेग फिर फैल गया और रामकृष्ण मिशन ने सिस्टर निवेदिता और अन्य लोगों के नेतृत्व में राहत कार्य शुरू किया। इतिहासकार जदुनाथ सरकार के अनुसार, "एक प्रत्यक्षदर्शी ने कहा कि जब सफाईकर्मी भाग गए थे, तब सिस्टर निवेदिता झाड़ू और टोकरी लेकर सड़कों, गलियों आदि को साफ कर रही थीं और उनके

ISSN (O) : 3048-9318
Vol. 1, No. 1, Year 2024
Available Online : https://sanatanodaya.com/

साहस और नागरिक कर्तव्य की भावना ने स्थानीय युवाओं को प्रेरित किया। रामकृष्ण मिशन को सबसे कठिन परिस्थितियों में जरूरतमंदों को सेवा प्रदान करने की शुरुआती चुनौतियों का सामना करते हुए नब्बे साल से अधिक समय बीत चुका है। मिशन का उद्देश्य उन आदर्श सत्यों का प्रचार करना है जो मुख्य रूप से भगवद गीता के निष्काम कर्म या कर्मयोग से मानवता की भलाई के लिए निकाले गए हैं ताकि श्री रामकृष्ण के व्यावहारिक जीवन को प्रदर्शित किया जा सके। मिशन की कार्य पद्धति लोगों को प्रशिक्षित करना और उन्हें ऐसे ज्ञान या विज्ञान की शिक्षा देने के लिए सक्षम बनाना है जो जनता के भौतिक और आध्यात्मिक कल्याण के लिए अनुकूल हों।[८] दूसरा, कला और उद्योग प्रदान करना और प्रोत्साहित करना और तीसरा, आम लोगों के बीच वेदांत और अन्य धार्मिक विचारों को पेश करना और फैलाना। इसलिए, मिशन के उद्देश्य और आदर्श पूरी तरह से आध्यात्मिक और मानवतावादी थे और उनका राजनीति से कोई संबंध नहीं था।

गीता का महत्व और निष्काम कर्म का शाश्वत संदेश आज भी प्रासंगिक है। इसे और अधिक प्रचार और समीक्षा की आवश्यकता है। गीता में बहुत समृद्ध और बहुआयामी विचार है। यह नैतिक और आध्यात्मिक जीवन के विभिन्न पहलुओं की अनुभूति को प्रकट करती है। यह भी कहा जा सकता है कि इसमें चेतना की सर्वोच्च अवस्था के सामंजस्य के रहस्य के अधिकांश मुख्य सुराग निहित हैं। यह जीवन के उन युद्धों की मांग करती है जिनमें हम हर समय खुद को पाते हैं, लेकिन विशेष रूप से महत्वपूर्ण क्षणों में। गीता दुनिया का एक महान धार्मिक ग्रंथ है और इसे राष्ट्रों और उनके युद्धों और कर्मों के महाकाव्य इतिहास में एक प्रकरण के रूप में दिया गया है। भगवद्गीता घोषणा करती है कि हमें केवल अपने निर्धारित कर्तव्य को करने का अधिकार है, लेकिन हम कर्मों के फल पाने के हकदार नहीं हैं। हमें कभी भी अपने आप को गतिविधियों के परिणाम का कारण नहीं मानना चाहिए। अकर्म करना पाप है इसलिए हमें अपने कर्तव्य को न करने में कभी भी आसक्ति नहीं रखनी चाहिए। हमें सफलता या असफलता के प्रति सभी आसक्ति को त्यागते हुए, अपने कर्तव्य को समभाव से करना चाहिए और ऐसी समता को योग कहा जाता है। अर्थात्, हमें योग के सिद्धांतों के अनुसार कर्म करना चाहिए। योग का अर्थ है, सदैव विचलित करने वाली इंद्रियों को नियंत्रित करके मन को परमात्मा पर केंद्रित करना। परमात्मा भगवान हैं। हमें अपने निर्धारित कर्तव्य के परिणाम से कोई लेना-देना नहीं है। लाभ और जीत भगवान की चिंता है। हमें भगवान की सलाह के अनुसार कार्य करने का निर्देश दिया गया है। यह अपनी अपील में सार्वभौमिक है। यह आने वाले सभी समय में सभी मानव जाति के लिए प्रासंगिक है। यह मनुष्य को खुद को जानने में मदद करता है, अर्थात, अपने वास्तविक स्वरूप, अपने कर्तव्यों और स्वयं और समाज के लिए जिम्मेदारियों को जानता है, स्वधर्म, स्वभाव, परधर्म, वर्ण, निष्काम कर्म आदि जैसी अवधारणाएं गीता में प्रमुख अवधारणाओं पर चर्चा की गई हैं ताकि व्यक्ति को अपने कर्तव्यों का एहसास हो सके, समाज में स्वतंत्रता के साथ बेहतर जीवन जी सके। यह मनुष्य को लोकसंग्रह के लिए खुद को समर्पित करने का आदेश और प्रेरणा भी देता त्याग ही गीता का सार है। व्यक्ति को अपने अज्ञान, सांसारिक भोगों के प्रति आसक्ति और अहंकारी अंधेपन का त्याग करना होगा ताकि उसका प्रेम, सहानुभूति, एकता की भावना जैसे दिव्य स्वभाव चमकें। गीता की शिक्षा सार्वभौमिक मूल्य रखती है, जो न केवल

समाज को आध्यात्मिक गतिरोध से बचाती है, बल्कि दुनिया में सार्वभौमिक भाईचारे और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व का भी प्रस्ताव करती है। चार्वाक को छोड़कर सभी शास्त्रीय भारतीय विचार प्रणालियों के अनुसार, व्यक्ति द्वारा किया गया कोई भी कार्य अपने पीछे कुछ प्रकार की शक्ति छोड़ जाता है, जिसमें वर्तमान जीवन या भविष्य के जीवन में सुख या दुख उत्पन्न करने की शक्ति होती है। कर्म का नियम पूरे जीवन के क्षेत्र में काम करता है।

इस संसार में ऐसा देखा गया है कि जो मनुष्य निष्काम भाव से लोक-कल्याण के लिए प्रयत्न करता है, वह योगी हो जाता है। जब एक बार यह आदर्श कि सब लोग उसी में हैं और वह सब लोगों में है, उसके मन में गहरी जड़ें जमा लेता है, तो फिर यह प्रश्न ही नहीं उठता कि क्या स्वार्थ दूसरों के हित से अलग है और वह दूसरों का हित करने में लग जाता है। इसके अलावा, यह भी कहा गया है कि जब सूर्य दूसरों को प्रकाश देता है, तो वह स्वयं को भी प्रकाश देता है, उसी प्रकार संत के कार्य उसके परोपकार से ही होते हैं। जो संत संकट की परवाह किए बिना और यह भेद किए बिना कि विपत्ति सहना अच्छा है या लोक-कल्याण को छोड़ देना अच्छा है, अपने कल्याण के कार्य करते रहते हैं और यदि परिस्थिति आ जाए, तो वे अपने प्राणों की आहुति देने में भी तत्पर रहते हैं, इसे ही सर्वकल्याण कहते हैं और यही सच्चा कर्मयोग है।

संदर्भ

१) विवेकानन्द, स्वामी, १९६०, वाणी एवं रचना, उद्बोधन कार्यालय, खण्ड-१, पृ. १६७ -६८

२) विवेकानन्द, स्वामी,१६ ऑक्टोबर-२०२२, परिव्राजक: मेरी भ्रमण कहानी, न्यू दिल्ली, प्रभात प्रकाशन, पृ. ८९

३) विवेकानन्द, स्वामी, १९६०, वाणी एवं रचना, उद्बोधन कार्यालय, खण्ड-४, पृ.२१७

४) विवेकानन्द, स्वामी, १९६०, वाणी एवं रचना, उद्बोधन कार्यालय, खण्ड-२, पृ. ४०७

५) विवेकानन्द, स्वामी,१६ ऑक्टोबर-२०२२, परिव्राजक: मेरी भ्रमण कहानी, न्यू दिल्ली, प्रभात प्रकाशन, पृ. ४५

६) विवेकानन्द, स्वामी,१९६३, संपूर्ण विवेकानंद ग्रन्थ अद्वैत आश्रम, ५ दिल्ली एन्टली रोड, कोलकाता, खंड-६ पृ. १०५-१०६

७) विवेकानन्द, स्वामी, १९६०, वाणी एवं रचना, उद्बोधन कार्यालय, खण्ड-१, पृ.१२५

८) विवेकानन्द, स्वामी,१६ ऑक्टोबर-२०२२, परिव्राजक: मेरी भ्रमण कहानी, न्यू दिल्ली, प्रभात प्रकाशन, पृ. ९८